यीशु को क्रूस पर मरना ज़्यों पड़ा था?

हमारे इन अध्ययनों में यीशु की मृत्यु के उद्देश्य पर संक्षेप में चर्चा की गई है। इस विषय पर सौ किताबें लिखी जाएं तो भी वे काफ़ी नहीं होंगी; हज़ार किताबों से भी पूछे जाने वाले हर सवाल का जवाब नहीं दिया जा सकता। पर इस समय के लिए कुछ अतिरिक्त टिप्पणियां काफी होंगी।[1]

''सबने पाप किया है'' (रोमियों 3:23क), और ''पाप की मज़दूरी मृत्यु है'' (रोमियों 6:23)। पापियों को आत्मिक मृत्यु अर्थात इस जीवन में परमेश्वर से पृथकता मिलती है (इफिसियों 2:1, 12)। इसके अलावा आने वाले जीवन में उन्हें ''दूसरी मृत्यु'' मिलेगी, यानी परमेश्वर से अनन्तकाल के लिए अलग रहने का सामना करना पड़ता है (प्रकाशितवाक्य 20:14; 21:8)।

पाप पवित्र परमेश्वर का अपमान है (रोमियों 3:23ख; देखें यशायाह 5:16; इब्रानियों 10:29)। शुभ कर्मों से किए जाने वाले एक पाप का दोष भी मिटाया नहीं जा सकता, क्योंकि हम अपने कर्मों से उद्धार नहीं पा सकते (देखें इफिसियों 2:8, 9)। पूरी कोशिश करने के बावजूद हम कुछ नहीं कर सकते (यशायाह 64:6; रोमियों 3:12)। न्यायी परमेश्वर होने के कारण (यशायाह 30:18), वह पाप को दण्ड दिए बिना नहीं रह सकता (देखें रोमियों 1:18)। क्योंकि सब पापी थे (और हैं) जो पाप के दोष को हटा नहीं सकते, इसलिए मनुष्य जाति की दशा बड़ी खराब थी।

परमेश्वर का धन्यवाद हो कि वह न्याय करने वाला ही नहीं, बल्कि *प्रेम* का परमेश्वर भी है (1 यूहन्ना 4:8)! प्रेम का परमेश्वर होने के कारण, वह चाहता था (और चाहता है) कि किसी का नाश न हो (देखें 2 पतरस 3:9)। परमेश्वर के इन दो गुणों से एक दुविधा दिखाई देती है। वह *धर्मी* होकर पाप को दण्ड कैसे दे सकता है और इसके साथ ही पापियों को *धर्मी ठहराने वाला* कैसे हो सकता है (देखें रोमियों 3:26)? इस दुविधा के लिए परमेश्वर का उत्तर था, ''मैं खुद ही कीमत चुकाऊंगा; मैं मनुष्य जाति के पापों का दण्ड भोगने के लिए *अपने पुत्र* को भेजूंगा'' (देखें यूहन्ना 3:16)। 1 यूहन्ना 4:10 में हम पढ़ते हैं, ''उसने हमसे प्रेम किया; और हमारे पापों के प्रायश्चित के लिए अपने पुत्र को भेजा।'' ''प्रायश्चित'' शब्द का अर्थ है, ''जो परमेश्वर के न्याय को तुष्ट करता, शान्त करता या सन्तुष्ट करता है।''

उस शांत करने वाले कष्ट का रूप कैसा होना चाहिए? मनुष्यजाति के साथ परमेश्वर के आरम्भिक व्यवहारों में, *बलिदान* अर्थात किसी दूसरे की जगह किसी का जीवन देने का सिद्धान्त था (उत्पत्ति 4:4; 8:20; 31:54; देखें 12:7)। यह सिद्धान्त बन गया था कि ''... बिना लोहू बहाए क्षमा नहीं होती'' (इब्रानियों 9:22)। सदियों तक परमेश्वर के निर्देशों के अनुसार सैकड़ों-हज़ारों पशुओं का बलिदान किया गया। समस्या यह थी कि ''अनहोना है कि बैलों और बकरों का लोहू पापों को दूर करे'' (इब्रानियों 10:4)। केवल एक ही बलिदान से यह काम हो सकता था और वह बलिदान परमेश्वर के सिद्ध पुत्र का था (देखें 1 पतरस 1:18, 19)। ''पापों की क्षमा'' सम्भव बनाने के लिए मसीह का बहुमूल्य लहू ''बहाया जाना'' आवश्यक था (मत्ती 26:28)।

लहू बहाने के यीशु के बलिदान का रूप कैसा होना चाहिए था? स्पष्टतया परमेश्वर की सनातन मंशा में (इफिसियों 3:11) क्रूस पहले से ही ठहराया गया था। भजन लिखने वाले ने कहा था कि दुखी सेवक के हाथ और पांव ''बेधे'' जाएंगे (भजन संहिता 22:16)। मसीह ने स्वयं भविष्यवाणी की थी कि उसे क्रूस पर चढ़ाया जाएगा (मत्ती 20:17-19; देखें लूका 24:6-8), जिसमें उसके हाथों और पांवों का बेधा जाना शामिल होना था।[2] जब यीशु रोमी क्रूस पर मरा, तो उसके घायल माथे और पीठ के साथ-साथ बेधे हुए हाथों और पांवों से लहू बह निकला। उसकी मृत्यु के बाद उसकी पसली से लहू बह निकला (यूहन्ना 19:34)। बाइबल के अनुसार उस लहू के द्वारा, हमें धर्मी ठहराया गया है, परमेश्वर के साथ मिलाया गया है और ईश्वरीय क्रोध से बचाया गया है (रोमियों 5:9, 10)।

क्या हम अच्छी तरह समझ सकते हैं कि हमारा उद्धार सम्भव बनाने के लिए यीशु की मृत्यु कैसे हुई? नहीं-परन्तु हम यह अवश्य समझ सकते हैं कि उसकी मृत्यु से परमेश्वर का न्याय पूरा हुआ (रोमियों 3:25; इब्रानियों 2:17; 1 यूहन्ना 2:2)। इसलिए जो कोई ''चाहे जो भी हो उसके प्रेम को ग्रहण करना चाहता हो'' (यूहन्ना 14:15; 1 यूहन्ना 4:19) और उद्धार की उसकी शर्तों को मानने से (मरकुस 16:15, 16; प्रेरितों 2:37, 38), उसका उद्धार हो सकता है! हम पूरी तरह तो नहीं समझ सकते कि परमेश्वर ने हमारे लिए क्या किया है, पर इसके लिए हम उसे महिमा देते हैं। ''परमेश्वर को उसके उस दान के लिए जो वर्णन से बाहर है, धन्यवाद हो'' (2 कुरिन्थियों 9:15)।

टिप्पणियां

[1]और अधिक चर्चा डेविड रोपर, *जीज़स क्राइस्ट एण्ड हिम क्रूसिफाइड* (अरवडा, कोलोराडो: क्रिश्चियन कम्युनिकेशन्स, 1976), में ''द सैंटर ऑफ़ गॉड'स लव'' में दी गई है। [2]जकर्याह 12:10 (देखें यूहन्ना 19:34, 37 में) मसीहा के ''बेधे जाने'' का एक अलग ढंग दिखाया गया है।